खोज न पाएंगे जनाब्धि में, विष के बीज सुगुप्त[1]।
जो हमने सायास[2] किए हैं, अरिजन[3] भीतर उप्त[4]।।44

कुछ–कुछ वे हो रहे प्रस्फुटित, कुछ हैं अभी प्रसुप्त।
जब होंगे सुप्ररूढ़[5] फलित वे, होगा अरिदल लुप्त।।45

करूणा संशय शमाधिक्य[6] से, चलते कभी न देश।
ऐसी संस्कृतियों के बचते, बस विस्तृत अवशेष।।46

भय भ्रम और भेद उपजाना, ही है सार्थक नीति।
इसका कुशल प्रयोग बढ़ाता, जय में पुष्ट प्रतीति[7]।।47

बहु वर्षो तक किया परिश्रम, हमने विविध प्रकार।
अब वह स्वप्न धर रहा क्रमशः, दृढ़ भौतिक आकार।।48

अब मरू था संतुष्ट, लग रही थी, जयश्री आसन्न[8]।
पूर्व ओर बढ़ चला शत्रु को, करने परम विपन्न[9]।।49

1. अच्छी तरह छिपे हुए 2. प्रयास पूर्वक 3. शत्रु 4. बोए गए 5. अच्छी तरह विकसित 6. शाम्त्वना की नीति की अधिकता 7. विश्वास 8. समीप ही स्थित 9. दुर्दशा करने



## अध्याय द्वितीय – अमित्र[1] चरित्र

पश्चिम से बढ़ रहा मरूस्थल, निगल रहा उद्यान।
झुलस रही वनश्री सुकुमारी, तुम सोते अनजान।। 1

बढ़ते आते हैं समीर[2] से प्रेरित बहु बरखान[3]।
अर्धचन्द्र शर दशशिरमोचित[4], ज्यों अदभ्र[5] द्युतिमान।। 2

पीडित करतीं इसे निरंतर, अंशुमान[6] की अंशु[7]।
अतः किए क्या मरू नें निज हित, सृजित विपुल[8] शीतांशु[9]।। 3

वाष्पीकृत वापी होती है, होती मृदा[10] सक्षार[11]।
विगत सकल लावण्य लवणता, का अभेद्य विस्तार।। 4

प्रेरित होकर प्रबल पवन से, छूने को आकाश।
जब बढ़ता मरू केवल होता, जीवन का बहु ह्रास।। 5

1. शत्रु 2. वायु 3. मरूस्थल में अर्धचन्द्राकार रेत के टीले 4. रावण के धनुष से छोड़े गये 5. प्रचुर 6. सूर्य 7. किरण 8. बहुत, अनेक 9. चन्द्रमा 10. मिट्टी 11. क्षार युक्त

अनिल[1] अनल[2] का दुस्सह संगम, जब ले उड़ता धूल।
सांसे होतीं रूद्ध चेतना, जाती वपु[3] को भूल।। 6

सम्मुख देख आपदा को भी, अविचल रहते धीर।
उनकी प्रज्ञा ही सकती है, सघन तिमिर[4] को चीर।। 7

नहीं युद्ध में फलदायक हैं, संभ्रम[5] या फिर रोष[6]।
आवश्यक है त्वरित जानना, अरि के सब गुण–दोष।। 8

पर[7] के जो जानते यथावत, प्राज्ञ[8] सकल गुणधर्म।
वे ही निश्चित कर सकते हैं, पटुनिगूढ़[9] रिपुमर्म[10]।। 9

पहले ज्ञान पुनः आयोजन, फिर आता है वेग।
शौर्य, सफलता का अभिरक्षण, शमन[11] विजित उद्वेग।। 10

अतः हमें अवगम्य[12] प्रथमतः, मरू का चित्र चरित्र।
विदितबलाबल[13] हो जाता है, आधा विजित अमित्र।। 11

नीरसता उत्ताप विरलता, भीषण झञ्झावात।
हैं इसके गुणधर्म विविधता, पर करना आघात।। 12

द्रुम[14] तक इसके कंटकधारी, पांसुल[15] हैं आचार।
गति अवरोधक, मात्र बढ़ाता, प्रबल पवन संचार।। 13

1. वायु 2. अग्नि 3. शरीर 4. अंधकार 5. हड़बड़ाहट 6. क्रोध 7. शत्रु 8. विद्वान 9. अच्छी तरह छिपा हुआ 10. शत्रु के निर्बल स्थान 11. शांत करना 12. समझने योग्य 13. जिसकी शक्ति तथा निर्बलता जॉच ली गई है 14. वृक्ष 15. धूल भरा, पातक युक्त



घर्षणशील परस्पर सिकता[1], होती और महीन।
धूसर सा फैलाव न दिखता, कोई दृश्य नवीन।। 14

घर्षित गोल अनावृत लघु नग[2], स्थित हैं मौन तटस्थ।
जैसे मुंडित चीवरधारी[3], क्षपणक[4] हों ध्यानस्थ।। 15

कर्तित नग्न शिखरिकाएँ हैं, कहीं–कहीं बहुरूप।
बालि निहत दुन्दुभि[5] का पंजर, बिखरा ज्यों अपरूप[6]।। 16

अस्थिरता पर एकरूपता, का अनन्त विस्तार।
मरू का बस यह जीवन दर्शन, यही क्रिया का सार।। 17

त्वरित उष्णता धारण करता, शीतल होता आशु[7]।
समता और क्षांति[8] से विरहित है, यह नित्य पिपासु[9]।। 18

जो वसु[10] को एकत्रित कर ले, बचता बस वह जीव।
हिंसा और हरण पर धारित, कटु जीवन की नींव।। 19

देता छिपा चरण चिह्नों को, दिग्भ्रम का यह मूल।
नित्य रजोमय[11] यदपि यहॉ की, प्रकृति परम प्रतिकूल।। 20

मृग मरीचिका[12] को दिखलाकर, हरता बुद्धि विवेक।
ढॉक पन्थ[13] को भटकाता यह, फिर भी बनता नेक।। 21

1. रेत 2. पर्वत 3. बौद्ध भिक्षु का वस्त्र 4. बौद्ध भिक्षु 5. राक्षस जिसे वालि ने मारा था 6. कुरूप 7. शीघ्र 8. सहनशीलता, क्षमाशीलता 9. प्यासा 10. जल 11. रजोगुणयुक्त 12. उष्णता व किरणों के कारण जल का मिथ्या आभास, 13.मार्ग–रास्ता

सागर तक सरिता न पहुँचने, देता है मरू देश।
रहता तृष्णावान सोखकर, जीवन[1] राशि अशेष।। 22

प्रेरित करना निशाचरण[2] को, मरू का यही स्वभाव।
धूल झोंकना आंखों में है, इसका पटुतर[3] दाव।। 23

निर्मल सरिता को भी करता, यह बस पंक[4] प्रवाह।
वारि[5] स्त्रोत खो जाते इसमें, विकल ढूँढ़ते राह।। 24

इसकी संगति पाकर होता, उष्ण और दुर्वार[6]।
भरने लगता प्राण प्रदाता, भी समीर हुंकार।। 25

मात्र देखता तरूणी तन में, यह हतभाग्य पयोद[7]।
केवल धर्षण[8] अभिमर्षण[9] तक, सीमित इसका मोद[10]।। 26

इसका अंतर शीतल होता, देख ध्वान्त[11] अधिकार।
विकल उष्ण उच्छ्वास छोड़ता, लख आलोक प्रसार।। 27

दूर दृष्टि संपन्न वेगयुत, सदल[12] और बलवान।
शव दर्शन में प्रीति अतः यह, मरू है गिद्ध समान।। 28

दूर दर्शिता से भी करता, शव अन्वेषण मात्र।
सिद्धिशक्तिसुप्रयोगदक्षता, रखता कहाँ कुपात्र।। 29

1. जल 2. रात्रि में संचरण 3. कुशल 4. कीचड़ 5. जल 6. जिसे रोका न जा सके 7. मेघ, स्तन 8. कुचलना, आक्रांत करना 9. मसलना, पददलित करना 10. प्रसन्नता 11. अंधकार 12. दल सहित समूह में



सब कुछ हो जाए अति नीरस, सब हो एकाकार।
सब कुछ करके दग्ध प्राप्त मैं, कर लूँ अमित[1] प्रसार।। 30

यही स्वप्न है मानी मरू का, इसे स्वतंत्र विचार।
लगते हैं अपवित्र, द्रोहमय, विचलन, भ्रष्ट विकार।। 31

ऋतुज वनस्पति पूरा करती, ज्यों झट जीवन चक्र।
सब हो शीघ्र अवाप्त[2] चाहता, है अधीर मन वक्र[3]।। 32

नहीं इसे उद्यान सह्य हैं, नहीं वाटिका रम्य[4]।
नहीं मानता अन्य मार्ग भी, हो सकता अनुगम्य[5]।। 33

यदा–कदा सुषमा[6] फैलाता, होकर मुदित निसर्ग[7]।
पर होती अल्पायु ऋद्धियुत्[8], रहता कहाँ अनर्ह[9]।। 34

तृषा[10] निवारण हेतु जहाँ हैं, परिसीमित जल कुण्ड।
जाते उष्ट्र सवार हांकते, निज भेड़ों के झुण्ड।। 35

समतलचारीदीर्घ उष्ट्र को, होती रहती भ्रान्ति।
दूर दृष्टि संपन्न वही है, ला सकता है क्रान्ति।। 36

यह उसको अज्ञात कि, जिसको अधिगत[11] है नगसानु[12]।
पहले वही देख पाता है, प्राची का शुभ भानु।। 37

1. विशाल 2. प्राप्त 3. कुटिल 4. रमणीय, सुन्दर 5. जाने योग्य, मानने योग्य 6. सुन्दरता 7. प्रकृति 8. समृद्धिवान 9. अयोग्य 10. प्यास 11. प्राप्त 12. पर्वत शिखर

उससे भी व्योमस्थ हंस का बृहत क्षितिज विस्तार।
समझो तथ्य क्रमेलक[1] करलो निज भ्रम का उपचार।।38

अपनी भेड़ों हेतु खोजता, नवल[2] घास के क्षेत्र।
फिरता आजीवन धरणी पर, लिप्सा व्याकुलनेत्र।। 39

खाता जाता जीवनक्रम में, निजपालितपशुमांस।
फिर भी उसको निज सद्गति पर, है अटूट विश्वास।। 40

नगहरीतिमा[3] देख दूर की प्रमुदित भेड़समूह ।
नहीं जान पाता पालक का, निर्मम बंचक व्यूह।। 41

कोमल बस परिधान[4] धारता, भीतर दृढ़ पाषाण।
बढ़ता जाता साथ समय के, मरूथल का परिमाण[5]।। 42

करता टीले सृजित रेत के, पुनः मिटाता तूर्ण[6]।
बीत गये युग किन्तु न हिंसा, दिखती होती पूर्ण।।। 43

चिर तक संचित रख सकता बस, अतिपुराण अवशेष।
नीरसता ने यही योग्यता, दी है इसे विशेष।। 44

1. ऊँट 2. नया 3. पर्वत की हरियाली 4. वस्त्र 5. आकार 6. शीघ्र



## अध्याय तृतीय - सन्देश

पहुँचा देना मरू तक मेरा, हितकारी सन्देश।
फिर भी रहे युयुत्सु[1] धारना, तुम योद्धा का वेश।। 1

क्षुद्र जन्तुओं को ही आश्रय, दे सकते मरूबन्धु।
देवभूमि पर अगणित[2] स्थावर[3], जंगम[4] का है सिन्धु।। 2

शान्त निशा में तुम्हें दीखते, जितने तारक वृन्द।
उससे अधिक जीव भारत में, फिरते हैं स्वच्छंद।। 3

मत भ्रम पालो निज महत्व का, निर्जीवनविस्तार।
सप्तमांश जगजीवन पाता, यहां अमेय[5] दुलार।। 4

तुम आच्छादनपर[6] परंतु हम, अनावरण को श्रेय।
सदा मानते सत्यान्वेषी, तत्व हमारा ध्येय।। 5

1. युद्ध के लिए उत्सुक 2. असंख्य अनेक 3. वृक्ष आदि 4. प्राणी गतिमान जीव 5. जिसे मापा न जा सके 6. ढांक लेने की प्रवृत्ति वाला